दिगम्बर तीर्थ गेरसप्पा के जैन मंदिर और उनकी वर्तमान दुर्दशा

स्वर्गीय श्री अगरचन्द नाहटा

जैन धर्म का प्रचार भारत के कोने-कोने में हुआ। चौबीस तीर्थंकरों के विहार, जन्म, दीक्षा, केवल और निर्वाण के स्थान तीर्थ रूप में प्रसिद्ध हुए और आगे चलकर अन्य मुनियों आदि के साधना और निर्वाण स्थल भी तीर्थ कहलाए। प्राचीन और चमत्कारी मूर्तियों के कारण भी तीर्थों की संख्या में वृद्धि होती गई। इस तरह दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों सम्प्रदायों के आज सैकड़ों तीर्थ-स्थान हैं। अनेक प्राचीन तीर्थ नष्ट हो गए और अनेक नये स्थापित होते गये। इनमें से कुछ स्थान तो दोनों सम्प्रदायों के लिए मान्य हैं, पर बहुत-से स्थान दोनों के अलग-अलग हैं। दक्षिण भारत में दिगम्बर सम्प्रदाय का अधिक प्रचार रहा। अतः उनके तीर्थ दक्षिण भारत में अधिक हैं। राजस्थान, गुजरात आदि स्थानों पर श्वेताम्बरों के तीर्थों की अधिकता है। इन तीर्थों के सम्बन्ध में अनेक ग्रन्थ भी प्रकाशित हो चुके हैं। ऐसे ग्रन्थों में भी दिगम्बरों की अपेक्षा श्वेताम्बरों के तीर्थों सम्बन्धी ग्रन्थ अधिक हैं।

तीर्थों की सुव्यवस्था के लिए वैसे तो अलग-अलग अनेक पेढ़िया हैं, पर श्वेताम्बर तीर्थों की सबसे बड़ी पेढ़ी आनन्द जी कल्याण जी की है, जिसका मुख्य कार्यालय अहमदाबाद में है। पालीताना आदि में भी इस पेढ़ी के कार्यालय हैं। दिगम्बर तीर्थों की बड़ी समिति का कार्यालय बम्बई में है। स्वर्गीय कानजी महाराज के श्रावकों ने इधर एक नई समिति गठित की है। पुरानी समिति का कोष तो करोड़ों रुपए का हो चुका है, इस नई समिति में भी लगभग एक करोड़ रुपए हैं। रुपया तो समाज की तीर्थों के प्रति भक्ति के कारण प्रायः एकत्र हो जाता है, किन्तु उसका सुव्यवस्थित सदुपयोग किया जाना बहुत आवश्यक है। हमारी दृष्टि में तीर्थों के जीर्णोद्धार का जैसा और जितना कार्य आनन्द जी कल्याण जी पेढ़ी ने किया है, वैसा दिगम्बर समाज की समिति ने नहीं किया।

तीर्थों को मानने-पूजने वाले व्यक्ति जहां रहते हैं वहां उनकी संभाल, पूजा-व्यवस्था आदि ठीक रहती है, किन्तु अनेक स्थानों पर मन्दिर तो काफी पुराने और अच्छे हैं परन्तु जैनों की आबादी न होने से उन मन्दिरों की स्थिति बहुत खराब है। ऐसा ही एक दिगम्बर तीर्थ गेरसप्पा है जिसका उल्लेख ज्ञानसागर रचित सर्वतीर्थ वन्दना और विश्वभूषण रचित सर्वत्रैलोक्य जिनात्मक जयमाला में पाया जाता है जो डॉ० विद्याधर जोहरापुरकर द्वारा सम्पादित 'तीर्थ वन्दना संग्रह' ग्रन्थ में प्रकाशित है। इनमें से विश्वभूषण ने तो गेरसप्पा में पार्श्वनाथ का उल्लेख ही किया है, किन्तु ज्ञानसागर ने तीन छप्पय इस तीर्थ के सम्बन्ध में दिए हैं जिनके अनुसार गिरसोपा में रानी भैरव देवी का राज्य है। पार्श्वनाथ के तीन भूमि मन्दिर हैं, चार मंजिला चतुर्मुख मन्दिर दो सौ खम्भों से सुशोभित है। इस नगर के गिरसप्पा, गेरसोप्पा, गेरुसोप्पे आदि विभिन्न नाम मिलते हैं। डां० जोहरापुरकर ने लिखा है कि यह नगर मैसूर प्रदेश में पश्चिमी समुद्र के किनारे स्थित है। इसके अतिरिक्त उन्होंने और कोई विवरण नहीं दिया। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने स्वयं इस नगर को देखा नहीं। हाल ही में पुरातत्व और कला के सुप्रसिद्ध श्वेताम्बरी विद्वान् श्री मधुसूदन ढांकी का एक लेख प्राच्य विद्या-मंदिर बड़ौदा की शोध-पत्रिका 'स्वाध्याय' के दीपोत्सव संवत् २०३७ के अंक में प्रकाशित हुआ है। उन्होंने लिखा है कि तीस वर्ष पहले गेरसप्पा के चतुर्मुख जिनात्मक का तलदर्शन कजिन्से ने प्रकाशित किया था। उससे मेरा ध्यान वहां के मन्दिरों की ओर गया। अभी चार वर्ष पूर्व कर्नाटक के शिकोगापंचक की ओर जाने पर स्वयं जाकर उस दिगम्बर तीर्थ को देखने का अवसर मिला।

श्री ढांकी आजकल 'अमेरिकन इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डियन स्टडीज' के प्रधान संचालक के रूप में बनारस में रहते हैं। इंस्टीट्यूट की ओर से उन्हें भ्रमण, फोटोग्राफी आदि सभी सुविधाएं प्राप्त हैं। अतः गेरसप्पा के जैन मंदिरों से सम्बन्धित आठ सुन्दर चित्र अपने लेख के साथ प्रकाशित किए हैं। इनमें से तीन चित्र जैन मूर्तियों के हैं, शेष मन्दिरों के। यद्यपि गेरसप्पा की यात्रा बहुत विकट है, फिर भी उन्होंने साहस करके जंगल में इन दिगम्बर जैन मंदिरों को खोज निकाला।

ये जैन मन्दिर जंगल में एकान्त स्थान पर गांव से कुछ दूर हैं। इन तक पहुंचने के लिए श्री ढांकी को नौका-यात्रा करनी पड़ी। अनेक कठिनाइयों के बाद वे पहुंच गए और सुन्दर चित्र व पूरी जानकारी लेकर लौटे। जगत् विख्यात जोगा के फॉल से लगभग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बीस मील दूर टेढ़े-मेढ़े रास्ते से होकर नदी पार कर वे गांव पहुंचे। वहां का प्राकृतिक दृश्य देखकर वे मुग्ध हो गए। चारों ओर हरियाली और लता-वृक्षों से घिरे इस स्थान पर उन्होंने मन्दिर को खण्डहर रूप में देखा जिसकी दीवारें जीर्ण-शीर्ण थीं। गर्भगृह में पहुंचने पर काले पत्थर की सुन्दर जिन-प्रतिमा के दर्शन हुए। उन्होंने आस-पास के जैन मन्दिरों को भी देखा और खण्डहरों व प्रतिमाओं के चित्र लिए।

ये सभी मन्दिर विजय नगर के उत्कर्ष काल के हैं। एक चतुर्मुख जिनालय भी है। मन्दिरों को देखकर उन्हें कंबोडिया के देवलों का स्मरण हो आया। इस मन्दिर में चारों ओर पद्मासनस्थ विशाल जैन-मूर्ति हैं। पहले मन्दिर की मूर्ति को तो उन्होंने भगवान् नेमिनाथ की माना है। चतुर्मुख जिनालय के गर्भ-गृह के पश्चिम दिशा की जिन-मूर्ति का चित्र 'स्वाध्याय' पत्रिका के मुखपृष्ठ पर दिया है। हिरिय बसती (बस्ती) के जिन चंडोग्र पार्श्वनाथ की मूर्ति का भव्य चित्र अन्तिम कवर पृष्ठ पर छपा है। पीछे कुंडलाकार सर्प हैं, ऊपर सात फण हैं। कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़ी हुई इस सपरिकर मूर्ति को देखते हुए मन नहीं भरता। ऐसी सुन्दर न जाने कितनी मूर्तियां भारतवर्ष के कोने-कोने में सर्वथा उपेक्षित, खंडित व अपूज रूप में पड़ी हैं। उनकी ओर तो किसी का ध्यान ही नहीं जाता और नई-नई अनेक मूर्तियां बनती जा रही हैं जो कला की दृष्टि से उन उपेक्षित पड़ी मूर्तियों के सामने कुछ भी नहीं हैं। मूर्तियां बनानी ही हैं तो प्राचीन मूर्तियों को सामने रखकर वैसी ही मनोहर मूर्तियां बनानी चाहिए जिन्हें देखते ही ध्यान लग जाए। गुप्तकालीन एक ऐसी ही पार्श्वनाथ की अन्य मूर्ति के सम्बन्ध में मैंने एक स्वतन्त्र लेख लिखा है। वह मूर्ति वर्तमान में पटना में कानोडिया जी के संग्रहालय में विद्यमान है। ऐसी विरल मूर्ति का जैन समाज को कुछ भी ध्यान नहीं है। यद्यपि गेरसप्पा की उक्त पार्श्वनाथ की मूर्ति उतनी प्राचीन नहीं है। श्री मधुसूदन ढांकी ने तो उसे 14वीं-15वीं शताब्दी की बताया है, किन्तु ज्ञानसागर और विश्वभूषण ने इस पार्श्वनाथ मूर्ति के कारण ही गेरसप्पा को 'पार्श्वनाथ तीर्थ' बतलाया है।

गेरसप्पा के शिलालेखों में १२वीं शताब्दी तक के प्राचीन लेख मिले हैं। १४वीं-१५वीं शताब्दी में विजयनगर महाराज के एक सामन्त का शासन था। सघन वनराजी, पूर्व और दक्षिण में दुर्गम पहाड़ और उत्तर में मेघवती, सदानीरा, इरावती नदियों से घिरा यह तीर्थ वास्तव में दर्शनीय है। प्रति वर्ष होने वाली अतिवृष्टि के कारण यहां के निवासी निकटवर्ती स्थानों में जाकर बस गए और इन मन्दिरों के चारों ओर जंगल छा गया। ईस्वी सन् १६२५ में एक पुर्तगाली प्रवासी इधर से गुजरा तो यहां के राजमहल खंडहर हो चुके थे, ऐसा उल्लेख उसने किया है। जब १४वीं-१५वीं शताब्दी में यहां के मन्दिर बने तब यहां काफी धनाढ्य जैन रहते थे। जैन-धर्म को राज्याश्रय भी प्राप्त था, इसीलिए इतने सुन्दर मन्दिर यहां बन सके। दिगम्बर मुनि भी दर्शनार्थ पहुंचते रहे। इसीलिए तीर्थ-मालाओं में यहां के पार्श्वनाथ तीर्थ का उल्लेख मिलता है। गुजरात के भट्टारक ज्ञानसागर १६वीं शताब्दी में यहां पहुंचे तब यह नगरी अच्छे रूप में विद्यमान थी। भैरवीदेवी यहां शासन करती थीं। पार्श्वनाथ के मन्दिर को त्रिभूमिया प्रासाद लिखा है। इस मन्दिर को दान दिए जाने का सन् १४२१ का शिलालेख प्राप्त है। गोकर्ण के महामहेश्वर मन्दिर सम्बन्धी १५वीं शताब्दी के शिलालेख में यहां की हिरिक बस्ती के चंद्रोगृह पार्श्वनाथ का उल्लेख है। ढांकी जी के अनुसार यहां की शांतिनाथ बस्ती को दान देने का उल्लेख भी मिलता है। चतुर्मुख जिनालय चार भूमि वाला और २०० खम्भों वाला होने का उल्लेख ब्रह्मज्ञान सागर ने किया है। इसके अनेक स्तम्भ अब नष्ट हो चुके हैं। सन् १३७८ से १३९२ के मध्य दंडनायक सोमण्ण के पुत्र रामण्ण की पत्नी रामक्के ने यहां तीर्थंकर अनन्तनाथ की बसती नामक मन्दिर बनाया था और नेमिनाथ की प्रतिमा अजय श्रेष्ठी ने बनवाई थी। [विस्तारपूर्वक जानकारी के लिए मधुसूदन ढांकी का 'स्वाध्याय' में प्रकाशित सचित्र लेख देखें।]

एक विनम्र अनुरोध

प्राचीन तीर्थ गेरसप्पा के सम्बन्ध में पुरातत्त्व सर्वेक्षण विभाग वर्षों पूर्व से विचारोत्तेजक सामग्री प्रस्तुत करता रहा है। किन्तु समाज की उदासीनता एवं केन्द्रीय संगठन के अभाव में दिगम्बर जैन समाज के अनेक महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक केन्द्र अब विस्मृति के गर्भ में चले गए हैं।

पश्चिम भारत के पुरातत्त्व सर्वेक्षण ने वर्ष 1892-93 में अनेक आवश्यक सूचनाएं देकर इन मन्दिरों के कलात्मक वैभव एवं पुरातात्त्विक महत्त्व से जनसाधारण को परिचित कराया था। उपरोक्त रपट में चतुर्मुख बस्ती के जिनालय में चतुर्मुख प्रतिमा (चार दिशाओं में चार तीर्थंकरों की प्रतिमा)का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है। साथ ही वर्धमान जिनालय एवं उसमें प्रतिष्ठित जिनबिम्ब, चतुर्मुख वस्ती में भगवान् पार्श्वनाथ के जिनबिम्ब, पार्श्वनाथ वस्ती एवं वर्धमान स्वामी के मन्दिर के विशेष कलात्मक पाषाणों एवं कलात्मक वैभव का परिचय दिया है।

जैन समाज को इस प्रकार की उपयोगी रपटों के आधार पर अपने उपेक्षित तीर्थों के विकास एवं सरक्षण में गहरी रुचि लेनी चाहिए। —सम्पादक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org